रोग की सही पहचान की तकनीक "सूक्ष्म सूची चूषण कोशिका परीक्षण "

NATIONAL INSTITUTE OF HYDROLOGY
PIN - 247667 (U.P.)

डॉ० रमा मेहता
वैज्ञानिक ब

किसी भी रोग की गलत पहचान से चिकित्सक तथा रोगी दोनों ही समान रूप से भय खाते हैं. किसी रोगी के लिए रोग की गलत पहचान का अर्थ है उसका गलत उपचार। यह रोगी के लिए जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। चिकित्सक के लिए किसी रोग की गलत पहचान का अर्थ है रोगी ने उसमें जो विश्वास व्यक्त किया है उसका ढह जाना। अनेक रोग ऐसे हैं जिनके बाहरी लक्षण एक दूसरे से काफी मिलते हैं ऐसी परिस्थितियों में इनके गलत पहचान की संभावनाएं बढ़ जाती है। क्षयरोग में अनेक बार कैंसर का तथा कैंसर में क्षयरोग का धोखा हो जाता है। इसी प्रकार जो देखने में थायरायड के लक्षण लगते हों तो हो सकता है वह वास्तव में कैंसर रोग हो। अनेक बार साधारण ट्यूमर का कैंसर समझ कर इलाज प्रारम्भ कर दिया जाता है अथवा अस्थि भंग की घटनाओं में अस्थि कैंसर की पहचान नहीं हो पाती।

इन अवस्थाओं में किंकर्तव्यविमूढ़ चिकित्सकों की सहायता के लिए एक नई तकनीक का विकास हुआ है जिसका नाम है " सूक्ष्म सूची चूषण कोशिका परीक्षण (फाइन नीड्ल एस्पिरेशन साइटोलोजी)। यह क्षयरोग, कैंसर, ट्यूमर, घेंघा (गलगंड) आदि रोगों को पहचानने की बहुत ही त्वरित, परिशुद्ध,पीड़ा रहित और उपयोग में आसान तकनीक है इसमें रोग की सही पहचान के लिए एक विशिष्ट सिरिंज पर लगी हुई एक सूक्ष्म (बारीक) सुई की सहायता से शरीर की कोशिकाएं, विभिन्न ऊतक अथवा तरल प्राप्त कर लिए जाते हैं।

इसके पहले रोग की पहचान के लिए शल्यक्रिया द्वारा प्रभावित अंग की कोशिकाएं ऊतक अथवा तरल पदार्थ प्राप्त करके उसकी जीव ऊति परीक्षा (बायोप्सी) की जाती है। इसमें शल्य क्रिया के लिए संज्ञाहरण की भी आवश्यकता पड़ती था। लेकिन सूक्ष्मसूची चूषण कोशिका परीक्षण तकनीक संज्ञाहरण एवं शल्यक्रिया समस्याओं से पूरी तरह मुक्त है।

इस तकनीक में परिवर्तनशील लंबाई की 21 से 23 गेज की एक सुई (सूची) 20 मिलीलीटर क्षमता की एक प्लास्टिक की सिरिंज एक विशेष हत्थे पर फिट रहती है. इस तकनीक के उपयोग से पूर्व प्रभावित अंग की त्वचा को जीवाणुरोधी द्रव से साफ किया जाता है. बाद में ट्युमर को बाएं हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से उस अंग के अन्दर सिरिंज से जुड़ी सुई डाली दी जाती है।

जब सुई ट्यूमर में अन्दर तक पहुंच जाती है, सिरिंज के प्लंजर को बाहर की ओर खींच लेते हैं जिसके फलस्वरूप सिरिंज के नली में निर्वात उत्पन्न हो जाता है। अब सुई को अन्दर ही

3-4 बार घुमाते हैं। पर्याप्त नमूने प्राप्त करने के लिए सुई को 3-4 दिशाओं में घुमाना चाहिए। कोशिकाओं अथवा ऊतक का द्रव सिरिंज में खिंचने के पश्चात सुई को बाहर निकालने से प्लंजर को छोड़ दिया जाता है जिससे सिरिंज के अन्दर और बाहर दबाव बराबर हो जाता है। सुई को सिरिंज से अलग कर दिया जाता है और सिरिंज में वायु भर जाने के पश्चात सुई को फिर से सिरिंज से जोड़ देते हैं। अब सिरिंज में भरे द्रव को एक साफ स्लाइड पर निकाल कर एक दूसरी साफ स्लाइड की समतल सतह की सहायता से इस द्रव का आलेप (स्मियर) तैयार किया जाता है। इसे वायु में थोड़ी देर तक सूखने देते हैं. अब इस आलेप को रंग कर सूक्ष्मदर्शी में देखकर रोग को ठीक-ठीक पहचाना जाता है. आवश्यक होने पर उसी स्थान से अथवा अन्य स्थानों से द्रव के नमूने पुनः प्राप्त किये जा सकते हैं।

पहले पेट, यकृत, अग्न्याशय, छाती, गुर्दे तथा फेफड़े में काफी अन्दर स्थित ट्यूमर अथवा कैंसर कोशिकाओं को पहचान पाना बहुत ही कठिन होता था। कभी-कभी तो इनकी शल्यक विधियों से भी पहचान कठिन और असम्भव हो जाती थी। लेकिन नई तकनीक ने असम्भव को सम्भव तथा कठिन को सरल बना दिया है। अधिक दुःसाध्य परिस्थितियों में इस तकनीक द्वारा प्रभावित अंग से तरल पदार्थ प्राप्त करने के लिए सुई डालने से पूर्व अल्ट्रासाउण्ड, एक्सकिरणों, सी टी स्कैन तथा द्वितल पलुओरोस्कोपी विधियों से प्रभावित अंग में सुई कहां डालनी है इस बात की ठीक-ठीक पहचान कर ली जाती है।

जिन अंगों की शल्य चिकित्सा की सलाह नहीं दी जाती उनकी विकिरण चिकित्सा के लिए विकिरण की बौछार से पूर्व प्रभावित अंग की ठीक-ठीक पहचान के लिए यह बेहतर तकनीक है। शल्यक्रिया अथवा विकिरण चिकित्सा से पूर्व रोग की ठीक-ठीक स्थिति जानने में भी इस तकनीक से काफी सहायता मिलती है। कुछ परिस्थितियों में जैसे जब ट्यूमर मृत हो तब इस तकनीक से गलत पारिणाम प्राप्त हो सकते हैं। लेकिन उचित सावधानी से गलती की संभावनाएं काफी कम की जा सकती हैं।

इस तकनीक का सर्वप्रथम उपयोग अमेरिकी चिकित्सकों ने 1930 के प्रारम्भिक वर्षो में किया था. लेकिन उस समय प्रयुक्त सुइयां मोटी हुआ करती थीं। सन् 1950 के प्रारम्भिक वर्षो में स्कैंडिनेवियाई देशों में इस तकनीक को उस समय पूर्णरूप से परिष्कृत किया गया जब डा० जोसेफ साइजैक ने सबसे पहले इस तकनीक में महीन सुइयों का उपयोग किया। यह तकनीक स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान शिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान चण्डीगढ़ के चिकित्सक डा० सुभाष गुप्ता के साथ् 1973 में भारत आई डा० गुप्ता ने स्वीडन में इस तकनीक के उपयोग का प्रशिक्षण प्राप्त किया था। धीरे-धीरे यह तकनीक भारत के प्रयुक्त चिकित्सा संस्थानों, मेडिकल कालेजों, अनुसंधान केंद्रों में प्रयुक्त होने लगी है। लेकिन रोग पहचान के दैनिक कार्यो में बड़े पैमाने पर इसका उपयोग केवल कुछ स्थानों तक ही सीमित है। इस कार्य के लिए स्वदेश में ही निर्मित उपकरण आयातित उपकरण जैसा तो नहीं है लेकिन डाक्टरों का मानना है कि इससे भी काम चलाया जा सकता है। आज विश्व के कुछ विकसित देशों में मस्तिष्क के सूक्ष्म ट्यूमरों तथा छाती के 2-3 मिलीमीटर आकार के कैंसर की कैंसर-कोशिकाओं की ठीक-ठीक पहचान के लिए एक अन्य अधिक संवेदी त्रिविम स्थान निर्धारण (स्टीरियोटेक्टिक) चूषण तकनीक का उपयोग प्रारम्भ किया गया है।